# कमलवत् जीवन

**प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,**

**पूर्व कुलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान**

कमल का पौधा कीचड़ से उत्पन्न होता हैं, किन्तु कीचड़ का प्रभाव उस पर नहीं होता। वह कीचड़ से निर्लिप्त रहता है। इसी प्रकार जो मनुष्य संसार में रहते हुए संसार में निर्लिप्त रहता है, संसार के गुण, दोष उसे प्रभावित नहीं करते। महाराज जनक विदेहराज कहलाते थे। सांसारिक वस्तुओं का उन पर कोई प्रभाव नहीं था। इसीलिए उनको विदेहराज कहा जाता था। इसी प्रकार जो व्यक्ति मोक्ष की इच्छा करता है, उसमें सांसारिक वस्तुओं के प्रति मोह नहीं होना चाहिए। आत्मा और शरीर का पार्थक्य देखना चाहिए। इसीसे अनासक्त भाव जागृत होता है। किसी के प्रति राग–द्वेष न रखना अनासक्त है। अनासक्त भाव का अर्थ है– किसी भी वस्तु के प्रति आसक्ति का ना होना। वस्तु परिग्रह नहीं है, वस्तु के प्रति आसक्ति का होना परिग्रह है। यह मेरा है, यह तुम्हारा है, यह आसक्ति है। मैं और मेरेपन की भावना आसक्ति का कारण है।

यह शरीर नाशवान है, यह संसार नाशवान है। यह चिन्तन अनासक्त भाव है। अनासक्त भाव से मोक्ष की प्राप्ति होती है। कर्त्तव्य भावना से कार्य करना चाहिए। आजकल व्यक्ति स्वार्थी हो गया है। स्वार्थ के कारण दृष्टि नकारात्मक हो गयी है। इससे समाज और राष्ट्र में बिखराव आ रहा है। मैं और मेरापन अहंकार को जन्म देता है। अहंकार से मनुष्य अपने को नहीं जान सकता। कबीरदासजी ने लिखा है– **जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि है मैं नाहि** अर्थात् जब अहंकार रहता है तो ईश्वर का दर्शन नहीं होता। जब ईश्वर से साक्षात्कार होता है तो अहंकार नष्ट हो जाता है।

अहंकार से व्यक्ति का मानसतन्त्र बिगड़ गया है। आज का मनुष्य धन प्राप्त करने की होड़ में इतना निमग्न हो गया है कि उसे कुछ दिखायी ही नहीं देता। वह धन को साध्य मान लिया है। जबकि धन साधन है साध्य नहीं। अनासक्त व्यक्ति का कोई शत्रु नहीं होता। सभी प्राणियों

के प्रति उसमें समता भाव रहता है। अनासक्त भाव से सुख की प्राप्ति होती है। मुक्ति को प्राप्त करने का यह उत्तम साधन है। इससे मानसिक शान्ति मिलती है। सुख और दुःख में सम रहना अनासक्ति भाव है। धन के प्रति लालसा का त्याग होना चाहिए। लोगों के मस्तिष्क में परिवर्तन होना चाहिए। शोषण रहित समाज तभी बन सकता है जब व्यक्ति अनासक्त भाव से जीवनयापन करें। शरीर में भी आसक्त नहीं होनी चाहिए। परिवर्तन सृष्टि का नियम है। अनासक्त की भावना एक सुन्दर गुण है। दार्शनिक दृष्टि से यदि हम चिंतन करें तो बंधन और मुक्ति जीव के लिए है। जिनसे कर्म बंधे या कर्मों का बंधना बन्ध है। मिथ्यादर्शनादि द्वारों से आए हुए कर्म पुद्गलों का आत्मप्रदेशों में एक क्षेत्रावगाह हो जाना बन्ध है। राग–द्वेषादि के निमित्त से जीव के साथ पौद्गलिक कर्मों का बन्ध निरन्तर होता है। जीव के भावों की विचित्रता के अनुसार वे कर्म भी विभिन्न प्रकार की फलदान शक्ति को लेकर आते हैं, इसी से वे विभिन्न स्वभाव या प्रकृति वाले होते हैं।

सांसारिक जो विषय–सामग्री है, वह और उसका जो भोक्ता है आत्मा ये दोनों संयोग होते ही बन्ध हो जाते हैं। कर्म पुद्गलों के ग्रहण को बन्ध कहा जाता है। जीव के द्वारा कर्म पुद्गलों का ग्रहण क्षीर–नीर की भांति परस्पर आश्लेष होता है, उसे बन्ध कहा जाता है। वह प्रवाहरूप से अनादि और जो भिन्न–भिन्न कर्म बंधते रहते हैं, उनकी अपेक्षा सादि है। मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और मन, वचन, काय की प्रवृत्ति ये सब कर्मों के आने के द्वार होने से आस्रव हैं। इनसे विपरीत सम्यक्त्व, देशव्रत, महाव्रत, मोह व कषायहीन शुद्धात्म परिणति तथा मन, वचन, काय के व्यापार की निवृत्ति ये सब नवीन कर्मों के निरोध के हेतु होने से संवर हैं। आसव्र का निरोध करना ही संवर है। जिनसे कर्म रुकें, वह कर्मों का रुकना संवर है।

इस संसार में वस्तु आसक्ति नहीं है। उसके प्रति आसक्ति का भाव परिग्रह है। जब तक वस्तु मेरे पास है तब तक वह मेरी है और जब वह अन्य के पास चली जाएगी तो अन्य की हो जाएगी। ऐसी विचारधारा रखना चाहिए। यह संसार विनाशी है आज है कल नहीं रहेगा। केवल आत्मा ही अविनाशी है। आत्मा सच्चिदानन्द स्वरूप है। संसार की पोद्गलिक वस्तुएं नाशवान है इनके प्रति आसक्ति नहीं होनी चाहिए। आसक्ति से कर्ता भाव आता है। यह मेरा है, यह तुम्हारा है। यह आसक्ति भाव है, यही बंधन है। शरीर मेरा है, मकान मेरा है यह

विनाशी सोच है। मैं आत्मा हूं, यह भाव सम्य्क ज्ञान है। संसार की सभी वस्तुएं क्षणिक है, इनमें परिवर्तन होता रहता है। संसार में भटकाने वाला तत्व है ममता। स्त्री, बेटा–बेटी, मकान के प्रति आसक्ति संसार में भ्रमण कराती है। आसक्ति से लालच बढता है। इसलिए मनुष्य को आसक्ति नहीं करनी चाहिए।

जो व्यक्ति इस संसार में कमलवत् जीवन जीता है उसे संसार के गुण–दोष प्रभावित नहीं कर सकते। वह संसार के गुण–दोषों से निर्लिप्त रहता है। भगवान महावीर ने कमलवत् जीवन जिया। संसार में रहकर वह संसार से निर्लिप्त रहे। संसार के गुण–दोष उन्हें प्रभावित नहीं कर सके। जहां आसक्ति होती है वही पर गुण–दोष प्रभावित करते हैं। निरासक्त भाव समता का भाव है। आत्मा भी शरीर में कमलवत् रहती है। शरीर के दोषों से आत्मा अप्रभावित रहती है।